महाराष्ट्र की भक्ति परंपरा में विठ्ठल

महाराष्ट्र की भक्ति परंपरा में विठ्ठल

- लीना मेहेंदळे, भा.प्र.से.

भक्ति व श्रध्दा मनुष्य जीवन में बडे सशक्त संबल का काम करते हैं| समाज को संभालने, चलाने और संपुष्ट करने में जिन सामूहिक या सांघिक गुणों का बडा उपयोग रहा है, भक्ति उनमे प्रमुख है | प्रेम, भक्ति, मैत्री, करुणा आदि कई छटाएँ हैं जो मनुष्य के निजी और सामाजिक जीवन को एक अलग ही रंग में रंग देते हैं |

किसीने भगवान से पूछा कि तुम कहाँ रहते हो, तो उत्तर मिला - भक्तों के हृदय में रहता हूँ | उससे कहा - सिद्व कर दिखाओ | तो भगवान ने हनुमान जी को प्रेरणा दी और हनुमान ने अपना हृदय चीर कर दिखा दिया कि वहाँ राम थे | महाभारत के समर प्रसंग में अर्जुन को विश्वरुप दिखाने के बाद भगवान ने कहा - इस तरह से मेरे रुप को देख पाना उनके लिये नही है जो केवल ज्ञानी हैं या तपस्वी हैं या दान पुण्य करने वाले हैं | तुम मेरे अनन्य भक्त हो, इसी अनन्य भक्ति के कारण मुझे तुम देख सकते हो |

किंवदंती है कि महाराष्ट्र के पंढरपुर गांव में पुण्डलीक नामक एक युवक रहता था | वृध्द माँ-बाप बिमार हो गए अतएव उनकी सेवा कर रहा था और विपन्न अवस्था से चल रहा था | तो कृष्ण और रुक्मिणी मे संवाद हुआ | रुक्मिणी ने कहा - तुम्हे जाकर उस युवक से मिलना चाहिए और उसकी सहायता करनी चाहिए |

कृष्ण चलकर पुण्डलीेक के घर आए | वह सेवा में जुटा था | दरवाजे सें अंदर किसी व्यक्ति के आने का भान हुआ तो बिना उधर देखे पूछा - कौन हो ? इसने बताया मैं विठ्ठल हूँ, तुम्हारी सहायता करना चाहता हूँ | पुण्डलीक ने फिर बिना देखे एक ईंट उसकी तरफ फेंक दी और कहा - इसी पर विश्राम करो, मैं माँ पिता की सेवा समाप्त कर लूँ तो तुमसे मिलता हँू | सेवा लम्बी चली और विठ्ठल महाशय ईट पर खडे के खडे | बडी देर हुई तो रुक्मिणी खोजते हुए आई | पुण्डलीक ने यह जानकर कि और कोई व्यक्ति घर के अंदर आया है, उसके लिए भी एक ईट सरका दी |

तबसे दोनों - विठ्ठल और रुक्मिणी - वहीं ईट पर खडे, कमर पर हाथ धरे प्रतीक्षा कर रहे हैं कि पुण्डलीक की माता - पिता - सेवा समाप्त हो, वह उनकी तरफ देखे तो आगे बात बढे | फँस कर रह गए | लोग पुण्डलीक के घर आते गए, भगवान के दर्शन कर धन्य होते गए | ताँता लग गया | बेचारे विठ्ठल और रुक्मिणी भक्त के बंधन में फँस गए | अब भागकर निकले कैसे ?

माना जाता है कि यह घटना करीब एक हजार वर्ष पूर्व की है | तब से महाराष्ट्र, कर्नाटक

और अन्य दक्षिणी राज्यों में विठ्ठल भक्ति की परंपरा है | प्राय: हर बडे गाँव में छोटा या बडा विठ्ठल मंदिर अवश्य होता है | महाराष्ट्रमें कृष्ण मंदिर कम ही मिलते हैं उनका विठ्ठल रूप ही मंदिरोंमे विराजना है - वह भी रुक्मिणी के साथ | विठ्ठल दर्शन के लिए पंढरपुर जाने की परिपाटी भी चल पडी | सो भी अपने गाँव से निकलकर पैदल | खासकर आषाढ की एकादशी से कार्तिक एकादशी तक | यही वह समय है जब चातुर्मास भी चल रहा होता है | किसान भी बोआई कर चुके होते हैं और अगले दो महीनों तक खेतोंको उनकी आवश्यकता नही होती | चूँकि विठ्ठल के साथ साथ रुक्मिणी भी है अतएव दर्शनार्थियों में महिलाओं की भी भारी संख्या होती है | पंढरपुर में कुछ काल रहकर भक्ति सागर में डुबकी लगाने की परंपरा भी चली आ रही हैं |

वैसे पंढरपुर देवालय के एक ट्रस्टी बताते हैं कि न्यायिक जाँच के दौरान जो इतिहास दर्ज हुआ वह यों है कि जब अल्लाउद्दिन खिलजी ने विजयनगर राज्य पर चढाई की और लूटपाट मचाते हुए देव - मंदिरों की मूतियाँ तोडने लगा तो विजयनगर के राजा ने चाहा कि उसके राज्य के मंदिर में स्थित इन मूर्तियों की पूजा भी न रूके और खिलजी के सिपाहियों को भनक भी न लगे | अतएव उसने एक साधारण गरीब परिवार में इन मूर्तियों को रखवा दिया और फिर वहीं पर मंदिर बन गया |

पश्चिम महाराष्ट्र की एक महत्वपूर्ण नदी भीमा है | इसका उगम पुणे जिले के भीमाशंकर स्थान से होता है जो कि भगवान शंकर के बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक माना जाता है | दक्षिण - पूरब की और बहती हुई यह भीमा जब पंढरपुर पहुँचती है तो चंद्राकृति मे पुरे शहर की परिक्रमा करती हुई विठ्ठल मंदिर के पास से गुजरती है | यहाँ इसका नाम पड जाता है -चंद्रभागा | विशाल, संथ जलप्रवाह और दोनो ओर काफी चौडाई में फैला हुआ चमकता बालुकामय किनारा | श्रद्धालुओं के लिए सारी मनभावन रचना | यह भी विठ्ठल का ही प्रताप माना जाता है |

तेरहवी सदी में पुणे के पास एक विद्वान विठ्ठल कुलकर्णी और उनकी पत्नी रखुमाबाई (रुक्मिणी नाम का ग्रामीण रुप) के घर तीन पुत्र निवृत्ति, ज्ञानदेव, सोपानदेव और कन्या मुक्ताबाई ने जन्म लिया | उनकी पूरी कथा वेदना, परिश्रम, ज्ञान, साधना और मुक्ति की कथा है| यही ज्ञानदेव आगे ज्ञानेश्वर कहलाए जिन्हे महाराष्ट्र का संत शिरोमणी माना जाता हैं | उन्होंने प्राकृत मराठी में भगवद्गीता का विस्तृत विवेचन काव्य बद्ध किया है | करीब साढे तीन हजार अभंगोवाली यह ज्ञानेश्वरी अपने आप में एक अद्भूत महाग्रंथ है जिसकी तुलना केवल ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य या तुलसी रामायण से की जा सकती है |

ज्ञानेश्वरी की रचना के बाद चारों बहन भाइयों ने पंढरपूर की यात्रा की | जिनके माता पिता के नाम भी रखुमाई और विठ्ठल ही हों, वे पंढरपूर निवासी रखुमाई - विठ्ठल की स्तुति मे जब लिखेंगे तो कैसा अद्भूत लिखेंगे, इसकी कल्पना की जा सकती है | उनके समकालीन कई संत तथा भक्त उन दिनों पंढरपुर या आसपास निवास कर रहे थे | उनमे नामदेव हैं, संत जनाबाई है, गोरा कुम्हार है, नरहरि सोनार है | पंढरपुर मे इस संत समागम से जो समाँ बंधा, उसके प्रतीक के रुप में भी आषाढ और कार्तिक एकादशी के दिन वहाँ पहुँचने की परंपरा ने जो जोर पकडा वह आज तक कायम है और निरंतर बढ रहा है |

महाराष्ट्र में विठ्ठल को एक ओर रखुमाईवरु अर्थात रखुमाई का पति तो साथ साथ माउली अर्थात माता के रूप में भी देखा जाता है। विठू(पुरुषवाचक), विठा(स्त्रीवाचक) सखा, राया जैसे अपनत्वभरे संबोधन जहाँ कोई तर्क नही केवल श्रद्धा है। विठ्ठलभक्ति किस उंचाई पर पहुँची है इसका अंदाज नामदेव के एक अभंग से लगाया जा सकता है |

देव म्हणे नाम्या पाहे परतून
तुज आलो असे मी शरण
न करि उदास, चाली तू पंढरी
ऐसे बोले हरि, नामियासी |

अर्थात् विठ्ठल पर रूठ कर जब नामदेव ने पंढरी छोडकर जाने का निश्चय किया, और गांव की सीमा लांघनेही वाला था कि विठ्ठल ने पीछे पीछे जाकर कहा - हे नामदेव, वापस मुडकर देखो, मैं तुम्हारी शरण आया हूँ, तुम मेरे से यूं मत रूठो और पंढरी छोड कर मत जाओ, ऐसे हरी ने नामदेव को मनाया |
ऐसा धन्य है पंढरपुर जहाँ भगवान ही भक्त की शरण में आता हैं | बाद में ज्ञानेश्वर और नामदेव ने पूरे उत्तर भारत की एकत्रित यात्रा की | इसके उपरान्त ज्ञानेश्वर ने समाधी ग्रहण की |

इससे दुखी नामदेवने पुन: उत्तर भारत के उन स्थानों पर यात्रा की जहाँ वेपहले ज्ञानेश्वर के साथ आए थे | इस यात्रा में उन्होंने हिंदी में दोहे और अभंग रचे जिनमें से कई गुरु ग्रंथ साहब में शामिल हैं | नामदेव के करीब सौ वर्षों के अंतर से गुरु नानक देव अवतीर्ण हुए थे और नामदेव के पदोंने उन्हें काफी प्रभावित किया था | इसी कारण उन्होंने नामदेव के पदोंको गुरू ग्रंथ साहिब में शामिल किया और स्वयं भी तीर्थयात्रा करते हुए नाशिक तक पधारे थे | कितने दुख की बात है कि नामदेव के इन हिंदी दोहोंकी पढाई महाराष्ट्र में नही होती और नामदेव के मराठी साहित्य की पढाई हिंदी या पंजाबी में नही होती | भारत

के राष्ट्रपती के कार्यकाल के दौरान श्री ज्ञानी जैल सिंह ने पुणे विश्वविद्यालय में एक नामदेव - चेअर की स्थापना करवा दी है, बस !

सत्रहवीं सदी में महाराष्ट्र के अनन्य संत तुकाराम भी विठ्ठल भक्ति में पूरी तरह रंगे हुए थे, इतने कि वे विठ्ठल को डाँट फटकार भी सकते थे। कहा जाता है की महाराष्ट्र की भक्ति परंपरा की नींव रचकर और उसे ठोक पीट कर मजबूत करने का काम ज्ञानेश्वर ने किया तो तुकाराम उस भक्ति मंदिर के स्वर्ण शिखर बने | मराठी में कहते हैं - ज्ञानदेवे रचिला पाया, तुका झालासे कळस ।

इसी लिए जब आषाढ के महिने में पंढरपुर की वारी (यात्रा) का समय आता है तो पहले आलंदी ग्राम से ज्ञानदेव की पालकी चलती है, बाद में देहू ग्राम से तुकाराम की पालकी आती है, और ये दोनों पंढरपुर तक जाते हैं | बीच बीच में अन्य लोग और छोटी मोटी पालकियाँ जुडती रहती हैं | विदर्भ, मराठवाडा जैसे महाराष्ट्र के दूर-दराज के सूबों से चलकर लोग आते रहते हैं, कोई पचास किलोमीटर से तो कोई पांचसौ किलोमीटर से | आषाढ के महिने में ये वारकरी अलग अलग समूहों में चलते रहते है | कई समूहोंमें केवल महिलाएँ ही होती है | कई बार दो-तीन के गुट में या इक्का दुक्का भी बेझिझक चलनेवाली महिलाएँ देखी जा सकती है | वैसे तो यात्रा परंपरा पूरे भारतवर्ष में है | वैद्यनाथ धाम, हरिद्वार, ऋषीकेश और गंगोत्री से रामेश्वर तक की यात्रा करनेवाले कितने काँवडिये हर वर्ष देखे जा सकते हैं | लेकिन उनमें महिलाओं को मैंने कभी कभार ही देखा है | इसे भी मैं महाराष्ट्र की एक विशेषता मानती हूँ |

वारकरी परंपरा सामाजिक प्रबोधन की एक सशक्त पाठशाला है | आषाढ और कार्तिक के महिने में हर दिन एक एक लाख के करीब वारकरी पंढरपुर पहुँचते है | वहाँ इन में से कई हजार पंढरपुर की "माला धारण" करते है | फिर इन्हें वारकरी नही बल्कि माळकरी कहा जाता है | ऐसा व्यक्ति जब तक माला धारण करे, वह तंबाखू, शराब या कोई अन्य दुर्व्यसन नही करता, न ही मांसाहार करता है | माला उतारने के लिये वापस पंढरपुर जाना पडता है |
मैनें अपनी नौकरी के सिलसिले में महाराष्ट्र के कई गाँवों में घूमते हुए ऐसे कई माळकरी देखे हैं जिनके जीवन में माला लेने के बाद एक अनोखा परिवर्तन आया है | महाराष्ट्र में कई तथाकथित नीची जातियों में भी शाकाहार और वैष्णव धर्म की परंपरा है जिसके पीछे पंढरपूर एक बडा प्रभावी कारण रहा है |

कई वर्षो से मेरे मन में एक सपना है | महीने दो महीने की पैदल यात्रा करते हुए पंढरपुर

पहुँचने वाले वारकरियों के भोजन, विश्राम आदि के लिये गांव-गांव के श्रद्धालु छावनी, भोजन इत्यादि की व्यवस्था करते है | यदि उसी दौरान इनके हाथ में रुई की पुनियाँ और तकली सौंपी जाये, और उनके द्वारा काते गए सूत को अगले पडाव पर खरीद लेने की व्यवस्था हो, तो कितने अधिक मानव - श्रम का सदुपयोग किया जा सकेगा ! उसी सूत से चादर या गमछा बुनकर उसे चढावे के रुप में विठ्ठल पर चढाकर फिर उन्ही वारकरियों को प्रसाद स्वरुप भेंट दिया जाय तो कैसा रहेगा ? ऐसा प्रसाद जब घर घर पहुँचेगा तो उस श्रम - प्रतिष्ठा से हमारा समाज धन्य हो जायगा |